इस्लाम का संदेश

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी

अनुवादक
डॉ. कौसर यज़दानी नदवी

ISLAM KA SANDESH (Hindi)
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट प्रकाशन न० -65

किताब का नाम : इस्लाम का पैग़ाम (उर्दू)
लेखक : मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी

पृष्ठ	:	24
तेरहवां संस्करण	:	अगस्त 2021 ई०
संख्या	:	1100
मूल्य	:	**₹18.00**

ISBN 978-81-8088-841-0

मुद्रक : S.K Enterprises, Tronica City, U.P

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह दयावान, कृपाशील के नाम से'

(अप्रैल १९७६ के शुरू में इस्लामिक कौंसिल आफ़ यूरोप के वावधान में लंदन में एक अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी सम्मेलन योजित हुआ, जिसमें समूचे विश्व के विद्वान, उलेमा तथा न्तकों ने इस्लाम के विभिन्न विषयों पर लेख प्रस्तुत किये। मुझे इस सम्मेलन में शरीक होने का निमन्त्रण मिला, पर मैं बिमारी कारण न जा सका, हां, लेख लिख कर वहां भेज दिया था। यह त्र ४ अप्रैल को सम्मेलन में पढ़ कर सुनाया गया। लेखक)

१. शुरू ही में यह स्पष्ट कर देना ज़रूरी है कि हमारे विश्वास अनुसार इस्लाम किसी ऐसे धर्म का नाम नहीं, जिसे पहली बार म्मद (सल्ल०) ने पेश किया हो और इस कारण आप को लाम का संस्थापक कहना उचित हो। कुरआन इस बात को पूरी ह स्पष्ट करता है कि अल्लाह की ओर से मानव-जाति के लिए शा एक ही धर्म भेजा गया है और वह है इस्लाम, अर्थात अल्लाह आगे नत-मस्तक हो जाना। संसार के विभिन्न भागों तथा भन्न जातियों में जो नबी भी अल्लाह के भेजे हुये आये थे, वे ने किसी अलग धर्म के संस्थापक नहीं थे कि उनमें से किसी के को नूहवाद और किसी के धर्म को इब्राहीमवाद या मूसावाद या वाद कहा जा सके, बल्कि हर आने वाला नबी उसी एक धर्म को करता रहा, जो उससे पहले के नबी पेश करते चले आ रहे थे।

२. नबियों में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की विशेषता वास्तव यह है कि—

(क) वे ख़ुदा के आख़िरी नबी हैं।

(ख) उनके ज़रिए से अल्लाह ने उसी मूल धर्म को फिर त
कर दिया, जो तमाम नबियों का लाया हुआ था।

(ग) उसमें विभिन्न भाषाओं के लोगों ने घट-बढ़ करके
अलग-अलग धर्म बना लिये थे, उन सबको अल्लाह ने छांट
अलग कर दिया और मुहम्मद (सल्ल०) के ज़रिए से वास्तविक र
विशुद्ध इस्लाम की शिक्षा मानव-जाति को दी।

(घ) उनके बाद चूंकि अल्लाह को कोई नबी भेजना नहीं
इसलिए उनको जो ग्रन्थ उसने दिया, उसे उसकी मूल भाष
शब्दशः सुरक्षित कर दिया, ताकि इंसान हर ज़माने में उ
सन्मार्ग पा सके। क़ुरआन मजीद के बारे में यह बात हर सन्दे
मुक्त है कि यह बिना किसी फेरबदल के ठीक वही क़ुरआन म
है, जो मुहम्मद (सल्ल०) ने पेश किया था। उसके अवतरण
समय से ही प्यारे नबी (सल्ल०) उसको लिखवाते रहे थे और
सिलसिला आप (सल्ल०) के देहान्त तक चलता रहा। इस
क़ुरआन मजीद को आप के पहले ख़लीफ़ा ने एक ग्रन्थ के रू
नक़ल करा के सुरक्षित कर लिया और फिर तीसरे ख़लीफ़ा ने उ
नक़लें इस्लामी जगत के समस्त केन्द्रों में भेज दीं। उस सम
लेकर आज तक हर देश और हर शताब्दी के लिखित
प्रकाशित क़ुरआन जमा करके देख लिया जाये, उनमें कोई अ
नहीं आयेगा। इसके अलावा नमाज़ में क़ुरआन मजीद पढ़ने
आदेश प्यारे रसूल की रिसालत के पहले ही दिन में दे दिया
था। इसलिए सैकड़ों सहाबा किराम ने पूरा क़ुरआन मजीद
तमाम सहाबा किराम (रज़ि०) ने इसका कोई न कोई भाग

ी (सल्ल०) के जीवन-काल ही में याद कर लिया था। उस समय लेकर आज तक कुरआन मजीद को शब्दश: याद करने और हर ल रमज़ान की नमाज़ तरावीह में पूरा कुरआन मजीद ज़ुबानी ाने का सिलसिला पूरे इस्लामी जगत में इस प्रकार प्रचलित चला रहा है और हर समय में लाखों हाफ़िज़ (कुरआन को कंठस्थ रने वाले) मौजूद रहे हैं। संसार की कोई धार्मिक पुस्तक भी इस कार न लिखित रूप में मौजूद है और न हाफ़िज़ों में महफ़ूज़ हुई है उसके सही होने में सन्देह की लेश-मात्र भी संभावना न हो।

(ङ) स्वयं नबी (सल्ल०) के जीवन और उनकी सुन्नत को हाबा (रज़ि०) और बाद के हदीस के आलिमों ने ऐसे अनुपम ढंग सुरक्षित कर लिया, जिससे अधिक श्रेष्ठतम ढंग से कभी किसी बी या किसी और ऐतिहासिक व्यक्ति के जीवन-वृत्तान्त और सके कथन व व्यवहार सुरक्षित नहीं किये गये। संक्षेप में, वह ढंग ह था कि जो व्यक्ति भी मुहम्मद (सल्ल०) से संबंधित करके कोई ात बताता था, उसे अनिवार्य रूप से यह बताना पड़ता था कि उस क किन उल्लेखकर्ताओं के माध्यम से वह बात पहुंची है और ल्लेख करने का यह क्रम किसी ऐसे व्यक्ति तक पहुंचता है या नहीं, जसने स्वयं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से वह बात सुनी हो या आप ो वह काम करते देखा हो। फिर जिन-जिन उल्लेखकर्ताओं के ाध्यम से ये कथन बाद के लोगों तक पहुंचे,उनके जीवन-वृत्तांत की ांच-पड़ताल की गई, ताकि यह जाना जा सके कि उनके ल्लिखित कथन विश्वसनीय हैं या नहीं?

इस प्रकार हदीसों के संग्रह तैयार किये गए, जिनके ंग्रहकर्ताओं ने हर हदीस के उल्लेखकर्ताओं का पूरा क्रम लिपिबद्ध र दिया और इसके साथ उल्लेखकर्ताओं की जीवनियों पर भी

पुस्तकें लिख दी गयीं, जिनकी मदद से आज भी हम यह खोज सक हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का जीवन कैसा था और उन्हो अपने कथन व आचरण से लोगों को क्या शिक्षा दी थी।

(च) इस प्रकार कुरआन मजीद और उसके लाने वाले नब की प्रामाणिक जीवनी और सुन्नत, दोनों आपस में मिलकर सदा लिए यह मालूम करने का विश्वसनीय माध्यम बन गये हैं कि अल्लाह का धर्म वास्तव में क्या है, वह हमारा क्या पथ-प्रदर्श करता है और हमसे क्या चाहता है?

३. यद्यपि हम मुहम्मद (सल्ल०) से पहले के तमाम नबिय पर ईमान रखते हैं— उन पर भी, जिनका उल्लेख कुरआन में आय है, और उन पर भी, जिनका ज़िक्र कुरआन मजीद में नहीं आया—और यह ईमान हमारी आस्था का ऐसा अनिवार्य अंग है जिसके बिना हम मुसलमान नहीं हो सकते, लेकिन हिदायत हासिल करने के लिए हम केवल मुहम्मद (सल्ल०) ही की तरफ़ रुजू करते हैं। यह किसी पक्षपात के आधार पर नहीं है, वास्तव में इसक कारण यह है कि—

(क) वे आख़िरी नबी हैं, इसलिए उनकी लाई हुई शिक्ष अल्लाह की ओर से अन्तिम हिदायत है।

(ख) उनके माध्यम से जो अल्लाह का कलाम हमको पहुंचा है वह विशुद्ध अल्लाह का कलाम है, जिसके साथ किसी इंसानी कलाम की मिलावट नहीं हुई है, वह अपनी मूल भाषा में सुरक्षित है, उसकी भाषा एक जीवन्त भाषा है, जिसे आज भी करोड़ों मनुष्य बोलते, लिखते और समझते हैं और उस भाषा का व्याकरण, शब्दकोष, मुहावरे, उच्चारण और आलेख में कुरआन-अवतरण के समय से अब तक कोई परिवर्तन नहीं आया है, और—

(ग) जैसा कि अभी मैं बयान कर चुका हूं, उनका जीवन-वृत्तांत, आचरण, कथन तथा कर्म के बारे में ऐतिहासिक रिकार्ड अधिक से अधिक संभव हद तक शुद्ध और अधिक से अधिक मुम्किन तफ़्सीली विवेचनों के साथ सुरक्षित है। यह बात चूंकि दूसरे नबियों पर चरितार्थ नहीं होती, इसलिए हम उन पर केवल ईमान रख सकते हैं, व्यावहारिक रूप से उनका पालन नहीं कर सकते।

४. हमारी आस्थाओं के अनुसार अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की रिसालत तमाम दुनिया के लिए और हर काल के लिए है, इसलिए कि—

(क) क़ुरआन मजीद उसकी व्याख्या करता है।

(ख) यह उनके अन्तिम नबी होने की तार्किक मांग है, क्योंकि संसार में एक नबी के अन्तिम नबी होने से स्वतः यह बात अनिवार्य हो जाती है कि वह तमाम इंसानों के लिए, और अपने बाद आने वाले हर काल के लिए नेता, तथा मार्ग-दर्शक हो।

(ग) उनके माध्यम से वह हिदायत पूर्ण रूप से दे दी गई है, जो सन्मार्ग पर चलने के लिए मनुष्य को चाहिए और यह भी उनके अन्तिम नबी होने का तार्किक परिणाम है, क्योंकि सम्पूर्ण सन्मार्ग के बिना, जो नबी भेजा गया हो, वह अन्तिम नबी नहीं हो सकता, बल्कि उसके बाद फिर एक नबी की ज़रूरत बाक़ी रह जाती है।

(घ) और यह एक वास्तविकता है कि उनके बाद पिछले चौदह सौ वर्ष में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं जन्मा है जो अल्लाह की ओर से नबी होने का दावा करने के साथ अपने चरित्र तथा आचरण और अपने काम तथा कलाम में नबियों से किसी छोटे दर्जे में भी समानता

रखता हो, जिसने वह्य-वाहक होने का दावा करके कोई ऐसा ग्रन्थ प्रस्तुत किया हो जो ईश-वाणी से नाम मात्र को भी समानता रखती हो और जिसे शरीअत देने वाला नबी कहा जाता हो।

५. वार्ता के इस चरण में यह जान लेना भी ज़रूरी है कि ईश्वर की ओर से मनुष्य को किस विशेष ज्ञान की आवश्यकता है, जो केवल नबियों के माध्यम से ही दिया गया है?

संसार में एक प्रकार की चीज़ें वे हैं, जिन्हें हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनुभव कर सकते हैं या अपने वैज्ञानिक अस्त्रों से काम लेकर इनका पता लगा सकते हैं और इन साधनों से प्राप्त होने वाली जानकारियों को प्रयोगों, अनुभवों तथा चिन्तन-मनन की सहायता से क्रमागत बनाकर नये-नये परिणामों तक पहुंच सकते हैं। इस प्रकार की चीज़ों के ज्ञान को ईश्वर की ओर से आने की कोई ज़रूरत नहीं है। यह हमारी अपनी खोज, यत्न, चिन्तन-मनन तथा शोध एवं गवेषणा का क्षेत्र है। यद्यपि इस मामले में भी हमारे स्रष्टा ने हमारा साथ बिल्कुल नहीं छोड़ दिया है। इतिहास के कालों में वह अनजाने ढंग से क्रम तथा विकास के साथ अपने पैदा किये हुये ज़गत से हमारा परिचय कराता रहा है। ज्ञान-विज्ञान के द्वार हम पर खोलता रहा है और समय-समय पर इलहामी (सांकेतिक) ढंग से किसी न किसी व्यक्ति को ऐसी कोई बात सुझाता रहा है, जिससे वह कोई नया आविष्कार या नया प्राकृतिक नियम मालूम कर लेने में समर्थ हो सकता है, पर कुल मिलाकर यह मानव-ज्ञान ही का क्षेत्र है, जिसके लिए अल्लाह की ओर से किसी नबी और ग्रन्थ के अवतरित होने की ज़रूरत नहीं है।

इस क्षेत्र में जो जानकारियां चाहिए, उन्हें हासिल करने के साधन इंसान को दे दिये गये हैं।

दूसरे प्रकार की चीज़ें वे हैं जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों और हमारे वैज्ञानिक अस्त्रों की पहुंच से परे हैं, जिन्हें न तो हम तोल सकते हैं, न नाप सकते हैं, न अपने वैज्ञानिक साधनों में से किसी साधन को इस्तेमाल करके उनकी वह जानकारी दे सकते हैं, जिसे 'ज्ञान' कहा जा सकता है। दार्शनिक और वैज्ञानिक उनके बारे में यदि कोई राय बना सकते हैं तो वह मात्र अटकल और अनुमान है, जिनके तर्क-सिद्धान्तों को स्वयं वे लोग भी निश्चित धारणा का रूप नहीं दे सकते, जिन्होंने उन धारणाओं को प्रस्तुत किया है। और यदि वे अपनी ज्ञान-सीमाओं को जानते हों तो न उन पर स्वयं विश्वास कर सकते हैं, न किसी को विश्वास करने के लिए कह सकते हैं।

यही वह क्षेत्र है, जिसमें मनुष्य सत्य जानने के लिए सृष्टि के स्रष्टा के दिये हुये ज्ञान का मुहताज है और स्रष्टा ने यह ज्ञान कभी इस तरह नहीं प्रदान किया है कि कोई पुस्तक छाप कर एक व्यक्ति के हाथ में दे दी हो और उससे कहा हो कि इसे पढ़कर स्वयं मालूम कर ले कि सृष्टि की और स्वयं तेरी वास्तविकता क्या है और इस वास्तविकता की दृष्टि से संसार के जीवन में तेरी कार्य-विधि क्या होनी चाहिए। इस ज्ञान को मनुष्यों तक पहुंचाने के लिए उसने सदैव नबियों और पैगम्बरों को माध्यम बनाया है, वह्य (ईश-वाणी) के द्वारा उनको सच्चाइयां बतायी हैं और उन्हें इस कार्य पर नियुक्त किया है कि यह ज्ञान लोगों तक पहुंचा दें।

६. नबी का काम केवल इतना ही नहीं है कि वह इस-वास्तविकता का ज्ञान लोगों तक पहुंचा दे, बल्कि उसका काम यह बताना भी है कि इस ज्ञान के अनुसार अल्लाह और मनुष्य के मध्य क्या वास्तविक संबंध है और क्या संबंध व्यावहारिक रूप से होना चाहिए? यह ज्ञान किन विश्वासों की, किन इबादतों की, किन

आचरणों की और संस्कृति व सभ्यता के किन नियमों की, अपेक्ष करता है और इस ज्ञान के अनुसार सामाजिकता, अर्थ, राजनीति न्याय, युद्ध-संधि, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, तात्पर्य यह कि जीवन के ह विभाग का गठन किन सिद्धान्तों पर होना चाहिए। नबी केवल इबादतों तथा संस्कारों की एक व्यवस्था लेकर नहीं आता, जिसे संसार की परिभाषा में 'धर्म' कहा जाता है, बल्कि वह जीवन की एक पूर्ण व्यवस्था लेकर आता है, जिसका नाम इस्लाम की परिभाषा में 'दीन' (जीवन-व्यवस्था) है।

७. फिर यह भी नहीं है कि नबी का मिशन मात्र 'दीन' का ज्ञान पहुंचाने तक ही सीमित हो, बल्कि उसका मिशन यह भी है कि जो लोग उसके पेश किये हुये दीन को स्वीकार कर के 'मुस्लिम' (आज्ञाकारी) बन जाएं उन्हें वह दीन समझाये। उनके विश्वास आचरण, इबादतें, कानूनी हुक्म, और समग्र जीवन-व्यवस्था से उनको परिचित कराये, उनके सामने स्वयं एक आदर्श मुस्लिम बन कर दिखाए, ताकि वे अपने जीवन में उसका पालन कर सकें, उन्हें व्यक्तिगत तथा समूहगत प्रशिक्षण देकर एक विशुद्ध इस्लामी संस्कृति व सभ्यता के लिए व्यवहारतः तैयार करे और उनको संगठित कर ऐसा गिरोह बना दे, जो संसार में अल्लाह के 'दीन' को व्यावहारिक रूप देने का यत्न करे, यहां तक कि अल्लाह का बोल सर्वोपरि हो जाए और दूसरे बोल नीचे पड़ जाएं। ज़रूरी नहीं है कि सब नबी अपने इस मिशन को सफलता के अन्तिम चरण तक पहुंचाने में सफल ही हो गये हों, बहुत से नबी ऐसे हैं, जो अपनी किसी कोताही के कारण नहीं बल्कि तंग नज़र लोगों के पैदा किये हुये अवरोधों तथा स्थिति की प्रतिकूलताओं के कारण इसमें सफल नहीं हो सके, लेकिन बहरहाल तमाम नबियों का मिशन यही था, हां

मुहम्मद (सल्ल०) की यह ऐतिहासिक विशेषता रही है कि उन्होंने अल्लाह की बादशाही पृथ्वी में उसी प्रकार कायम कर के दिखा दी, जैसी वह आकाश में है।

८. क़ुरआन मजीद और मुहम्मद (सल्ल०) ने आरम्भ ही से अपना सम्बोधन या तो तमाम इंसानों के लिए समान रखा है या फिर इंसानों में से जो भी इस्लाम का पैग़ाम स्वीकार कर लें, उनको 'ईमान वाला' होने के रूप में सम्बोधित किया है।

क़ुरआन मजीद को शुरू से लेकर आख़िर तक देख जाइए और मुहम्मद (सल्ल०) के भाषणों तथा वार्ताओं के पूरे रिकार्ड की भी छान-बीन कर जाइए, आप कहीं यह न देखेंगे कि इस ग्रन्थ ने और इसके लाने वाले रसूल ने किसी विशेष देश, जाति, नस्ल, या रंग या वर्ग के लोगों को या किसी विशेष भाषा के बोलने वालों को पुकारा हो। हर जगह या तो 'या आदम की औलाद!' या 'ऐ लोगो!' या 'ऐ इंसानो!' कह कर सम्पूर्ण मानव-जाति को इस्लाम अपनाने का आह्वान किया गया है या फिर इस्लाम अपनाने वालों को आदेश देने के लिए 'ऐ ईमान वालो' कह कर सम्बोधित किया गया है। इससे स्वतः यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इस्लाम का सन्देश विश्वव्यापी है और जो लोग भी इसे अपना लें, वे, बिल्कुल बराबर के अधिकारों के साथ 'मोमिन' (ईमान वाले) हैं। क़ुरआन कहता है, 'ईमान वाले, तो एक दूसरे के भाई हैं।' अल्लाह के रसूल फ़रमाते हैं कि जो लोग भी इस्लामी मान्यताओं को स्वीकार कर लें और मुसलमानों की-सी कार्य-विधि अपना लें, उनके अधिकार वही हैं, जो हमारे हैं और उनके कर्त्तव्य भी वही हैं जो हमारे हैं।

इससे भी अधिक स्पष्ट शब्दों में अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया, सुनो, तुम्हारा पालनहार भी एक ही है और तुम्हारा बाप (आदम)

भी एक। किसी अरबी को किसी ग़ैर-अरबी पर कोई बड़ाई नहीं और न ग़ैर-अरबी को किसी अरबी पर कोई बड़ाई है,न कोई काल किसी गोरे पर प्रमुखता रखता है और न कोई गोरा किसी काले पर। बड़ाई है तो ईश-भय के आधार पर है। खुदा के नज़दीक तुम मे सर्वाधिक बड़ाई वाला व्यक्ति वह है जो सबसे बढ़कर परहेज़गार है।

९. इस्लाम की बुनियाद जिन विश्वासों पर है, उनमें सबसे प्रमुख और सर्वाधिक महत्वपूर्ण एक अल्लाह पर ईमान है, केवल इस बात पर नहीं कि अल्लाह मौजूद है और केवल इस बात पर भी नहीं कि वह एक है, बल्कि इस बात पर कि वही अकेले इस सृष्टि का स्रष्टा, स्वामी, शासक और प्रशासक है। उसी के क़ायम रखने से यह सृष्टि क़ायम है, उसी के चलाने से यह चल रही है और उसकी हर चीज़ को अपने क़ायम व बाक़ी रखने के लिए जिस आजीविका या ऊर्जा की ज़रूरत है, उसका जुटाने वाला वही है। सम्प्रभुत्व के समस्त गुण केवल उसी में पाये जाते हैं और कोई लेशमात्र भी उसके साथ शरीक नहीं है। प्रभुत्व के समस्त गुणों का भी मात्र वही पोषक है और इनमें से कोई गुण उसकी ज़ात के सिवा किसी को हासिल नहीं। पूरी सृष्टि को और उसकी एक-एक चीज़ को वह एक साथ देख रहा है, सृष्टि और उसकी हर वस्तु को वह सीधे से जानता है— न केवल उसके वर्तमान को, बल्कि उसके अतीत और भविष्य को भी— यह सब कुछ देखने वाली दृष्टि और व्यापक परोक्ष ज्ञान उसके अतिरिक्त किसी को प्राप्त नहीं। वह सदैव से है और सदैव रहेगा. उसके अतिरिक्त सब नाशवान हैं और वह अपने अस्तित्व से स्वत: जीवित और बाक़ी है, वह न किसी की सन्तान है और न कोई उसकी सन्तान, उसकी ज़ात के अलावा संसार में जो भी है, वह उसकी

रचना है और संसार में किसी की भी यह हैसियत नहीं है कि उसको किसी अर्थ में भी सृष्टि के स्वामी का समवर्ती या उसका बेटा या बेटी कहा जा सके।

वही मनुष्य का वास्तविक उपास्य है। किसी को इबादत में उसके साथ शरीक करना सबसे बड़ा पाप और सबसे बड़ी बेवफ़ाई है। वही इंसान की दुआएं सुनने वाला है और उन्हें कुबूल करने या न करने के अधिकार वही रखता है, उससे दुआ न मांगना अनुचित अभिमान है, उसके अतिरिक्त किसी और से दुआ मांगना अज्ञानता है और इसके साथ दूसरों से भी दुआ मांगना खुदाई में ग़ैर खुदा को खुदा के साथ शरीक ठहराना है।

१०. इस्लाम के अनुसार अल्लाह का सम्प्रभुत्व पारभौतिक ही नहीं, बल्कि राजनीतिक तथा विधिगत भी है और इस सम्प्रभुत्व में भी कोई उसका शरीक नहीं। उसकी पृथ्वी पर और उसके पैदा किये हुये जीवों पर, उसके अलावा किसी को हुक्म चलाने का अधिकार नहीं है, भले ही वह कोई बादशाह हो या शाही परिवार हो, या शासक वर्ग हो या कोई ऐसा लोकतंत्र हो जो जन-सम्प्रभुत्व को मानता हो। उसके मुकाबले में जो खुदमुख़्तार बनता है, वह भी द्रोही है और जो उसको छोड़ कर किसी दूसरे का आज्ञापालन करता है, वह भी द्रोही। और ऐसा ही द्रोही वह व्यक्ति या संस्था है, जो राजनीतिक तथा विधिगत सम्प्रभुत्व को अपने लिए मुख्य करके अल्लाह के अधिकार क्षेत्र को व्यक्तिगत क़ानून या धार्मिक आदेश व निर्देश तक सीमित करता है। वास्तव में अपनी पृथ्वी पर पैदा किए हुये मनुष्यों के लिए शरीअत देने वाला उसके सिवा न कोई है, न हो सकता है और न किसी को यह हक़ पहुंचता है कि इस श्रेष्ठतम सम्प्रभुत्व को चुनौती दे।

११. इस्लाम की इस ईश-धारणा के अनुसार कुछ बातें फ़ितरी तौर पर अनिवार्य होती हैं–

(क) अल्लाह ही अकेला इंसान का वास्तविक उपास्य (अथवा दूसरे शब्दों में उपासना का अधिकारी) है, जिसके सिवा किसी और की यह हैसियत ही नहीं है कि इंसान उसकी इबादत करे।

(ख) वही अकेला सृष्टि की तमाम शक्तियों का स्वामी है और इंसान की दुआओं का पूरा करना या न करना बिल्कुल उसके अधिकार में है, इसलिए इंसान को केवल उसी से दुआ मांगनी चाहिए और किसी के बारे में यह तक न सोचना चाहिए कि उससे भी दुआ मांगी जा सकती है।

(ग) वही अकेला मनुष्य के भाग्य का स्वामी है और किसी दूसरे में यह सामर्थ्य नहीं है कि वह मानव-भाग्य बना सके या बिगाड़ सके। इस लिए मनुष्य की आशा और उसकी आशंका, दोनों अनिवार्यतः उसी को लौटती हैं। उसके अतिरिक्त न किसी से आशाएं की जानी चाहिएं, न किसी से डरना चाहिए।

(घ) वही अकेला, इंसान और उसके आप-पास के जगत का स्रष्टा तथा स्वामी है, इसलिए इंसान की हक़ीक़त तथा सम्पूर्ण जगत की वास्तविकताओं का सीधा तथा पूर्ण ज्ञान केवल उसी को है और हो सकता है। बस वही जीवन के विकट रास्तों में इंसान को सही हिदायत और सही जीवन-विधि दे सकता है।

(ङ) फिर चूंकि इंसान का रचयिता तथा स्वामी वह है और वही इस पृथ्वी का स्वामी है, जिसमें इंसान रहता है, इसलिए इंसानों पर किसी दूसरे का सम्प्रभुत्व या स्वयं अपना सम्प्रभुत्व पूर्णतः कुफ़्र है और इसी प्रकार इंसान का स्वयं अपना विधाता बनना, या किसी

और व्यक्ति या व्यक्तियों अथवा संस्थाओं के विधान बनाने के अधिकार को मानना भी इसी श्रेणी में आता है। अपनी धरती पर अपनी सृष्टि का शासक तथा विधाता अनिवार्यतः केवल वही हो सकता है, और,

(च) सम्प्रभुत्व का वास्तविक स्वामी होने की हैसियत से उसका क़ानून वास्तव में सर्वोच्च क़ानून है और मनुष्य के लिए विधान बनाने का अधिकार केवल उसी सीमा तक है, जिस सीमा तक वह उस सर्वोच्च विधान के अधीन हो या उससे उद्धृत हो या उसकी दी हुई अनुमतियों पर आधारित हो।

१२. इस चरण पर हमारे सामने इस्लाम का दूसरा महत्वपूर्ण विश्वास आता है और वह है रिसालत (ईश-दूतत्व) का विश्वास। रसूल वह व्यक्ति है, जिसको माध्यम बना कर अल्लाह अपना क़ानून इंसान को देता है और यह क़ानून हमको रसूल से दो शक्लों में मिलता है—

१. एक अल्लाह के कलाम के रूप में, जो शब्दशः रसूल पर अवतरित किया गया है, अर्थात क़ुरआन मजीद।

२. दूसरे वे कथन तथा आचरण और आदेश एवं निषेध, जो रसूल ने अपने अनुयायियों को ईश्वरीय पथ-प्रदर्शन के अनुसार दिये, अर्थात् सुन्नत।

इस विश्वास का महत्व यह है कि यदि यह न हो तो अल्लाह पर ईमान मात्र एक सैद्धान्तिक नियम बन कर रह जाता है, मिसाल के तौर पर जो चीज़ 'ख़ुदापरस्ती' के विश्वास को एक सभ्यता, एक संस्कृति तथा एक जीवन-व्यवस्था के रूप में ढालती है, वह रसूल का सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पथ-प्रदर्शन है। उसी के माध्यम से

हमें क़ानून मिलता है और वही इस क़ानून के अनुसार जीवन की व्यवस्था स्थापित करता है। इसलिए तौहीद के बाद रिसालत पर ईमान लाये बिना कोई व्यक्ति व्यवहारतः 'मुस्लिम' नहीं हो सकता।

१३. इस्लाम में रसूल की हैसियत इस प्रकार स्पष्टतः बयान की गयी है कि हम ठीक-ठीक यह भी जान सकते हैं कि रसूल क्या है? और यह भी कि वह क्या नहीं है?

रसूल लोगों को अपना नहीं, बल्कि अल्लाह का बन्दा बनाने के लिए आता है और वह स्वयं भी अपने आप को अल्लाह का बन्दा ही कहता है। नमाज़ में प्रति-दिन कम से कम १७ बार जो कलमा-ए-शहादत पढ़ने की शिक्षा मुहम्मद (सल्ल०) ने मुसलमानों को दी है, उसमें यह वाक्य अनिवार्यतः पढ़ा जाता है कि मैं गवाही देता हूं 'कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।'

क़ुरआन मजीद इस मामले में किसी सन्देह मात्र की गुंजाइश नहीं छोड़ता कि रसूल एक इंसान है और ख़ुदाई में उसका लेश-मात्र भी कोई हिस्सा नहीं है, वह न परमानवीय है, न इंसानी दुर्बलताओं से उच्चतर है, [भूख-प्यास लगना, थकना, आराम की ज़रूरत महसूस करना, सोना, बीमार होना, ज़ख़्मी होना, ख़ुशी और दुख से प्रभावित होना और ऐसी ही अन्य बातें हैं, इन्सान होने के नाते प्रत्येक मनुष्य की तरह रसूल को भी पेश आती हैं।] न अल्लाह के ख़ज़ानों का मालिक है, न ग़ैब का जानने वाला है कि उसको अल्लाह की तरह सब कुछ मालूम हो। वह दूसरों को लाभ पहुंचाने वाला और नुक़्सान पहुंचाने वाला तो दूर की बात, स्वयं अपने लिए भी किसी लाभ-हानि का अधिकार नहीं रखता। उसका काम सन्देश पहुंचा देना है, उसके अधिकार क्षेत्र में किसी को सन्मार्ग पर ले आना नहीं है, न इंकार करने

वालों की जांच-पड़ताल करना और न उन पर अज़ाब नाज़िल कर देना उसके अधिकार में है। वह स्वयं अगर ईश्वर की अवज्ञा करे, या अपनी ओर से कोई चीज़ गढ़ कर ईश्वर से सम्बन्धित कर दे या ईश्वर की वह्य में स्वतः लेश-मात्र भी फेर-बदल करने का साहस कर डाले तो वह ईश्वर के अज़ाब से नहीं बच सकता।

मुहम्मद (सल्ल०) रसूलों में से एक हैं। रिसालत से उच्चतर किसी हैसियत के मालिक नहीं हैं। वे अपने अधिकार से किसी चीज़ को हलाल और किसी को हराम करने या दूसरे शब्दों में अल्लाह की आज्ञा के बिना स्वयं विधाता बन जाने के अधिकारी नहीं हैं। उनका काम उस वह्य का पालन करना है, जो उन पर खुदा की तरफ़ से उतरी हो।

इस तरह इस्लाम ने उन तमाम अतिशयोक्तियों से मानव-जाति को बचा लिया जो मुहम्मद (सल्ल०) से पहले आने वाले नबियों के पालनकर्ताओं ने अपने पेशवाओं के हक़ में किये थे यहां तक कि उनको अल्लाह या उस जैसा या उसकी सन्तान, या उसका अवतार तक बना डाला था। इस तरह की तमाम अतिशयोक्तियों का निषेध कर के इस्लाम ने रसूल की जो असल हैसियत बयान की है, वह यह है:—

रसूल पर ईमान लाये बिना कोई व्यक्ति मोमिन नहीं हो सकता। जो व्यक्ति रसूल का आज्ञापालन करता है, वह वास्तव में अल्लाह का आज्ञापालन करता है, क्योंकि अल्लाह ने जो रसूल भी भेजा है, इसीलिए भेजा है कि उसका पालन किया जाए। हिदायत वही पा सकता है जो रसूल का आज्ञापालन करे, रसूल जो हुक्म दे, उसे स्वीकार करना चाहिए और जिससे मना करे उससे रुक जाना चाहिए। (इस मामले का स्पष्टीकरण स्वयं मुहम्मद (सल्ल०) ने इस प्रकार किया है कि मैं एक शुभ-सूचना देने वाला ही हूं, जो हुक्म मैं

तुम्हें धर्म के मामले में दूं, उसका पालन करो और जो बात अपनी राय से कहूं तो मैं भी एक इंसान हूं। अपनी दुनिया के मामलों को तुम अधिक जानते हो।) अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की सुन्नत वास्तव में कुरआन मजीद के मंशा की व्याख्या है और यह व्याख्या कुरआन मजीद के लेखक, अर्थात अल्लाह ने उनको खुद सिखाई थी, इस लिए उनकी व्याख्या अपने पीछे ईश्वरीय प्रमाण-पत्र रखती है, जिससे हटकर कोई व्यक्ति कुरआन मजीद की कोई व्याख्या स्वतः करने का अधिकारी नहीं है।

अल्लाह ने रसूल के जीवन को आदर्श जीवन घोषित किया है। कोई व्यक्ति मोमिन नहीं हो सकता, जब तक वह रसूल के निर्णय को न स्वीकार करे। मुसलमानों का यह काम नहीं है कि जिस मामले का फ़ैसला अल्लाह और उसके रसूल ने कर दिया हो, उसमें वे स्वयं कोई फ़ैसला करने के अधिकारी हों, बल्कि मुसलमानों का यह काम भी नहीं है कि किसी पेश आने वाले मामले में कोई फ़ैसला करने से पहले यह देख लें कि अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म इस मामले में क्या है।

उपर्युक्त वर्णन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अल्लाह तआला ने रसूल के माध्यम से इंसान को केवल एक उच्चतर क़ानून ही नहीं दिया है, बल्कि स्थाई मान-दंड भी दिये हैं। कुरआन मजीद और सुन्नत में जिस चीज़ को 'ख़ैर' (भलाई) कहा गया है, वह सदा के लिए ख़ैर है, जिस चीज़ को 'शर' (बुराई) कहा गया है, वह हमेशा के लिए 'शर' है, जो चीज़ फ़र्ज (अनिवार्य) की गई है, वह सदा के लिए फ़र्ज़ है, जिस चीज़ को हलाल ठहराया गया है, वह हमेशा के लिए हलाल है और जिस चीज़ को हराम क़हा गया है, वह हमेशा के लिए हराम है। इस क़ानून में किसी प्रकार का संशोधन, या घट-बढ़ या निरस्त करने का अधिकार किसी को प्राप्त नहीं है,

मगर यह कि कोई व्यक्ति या गिरोह या क़ौम इस्लाम ही को छोड़ देने का इरादा रखती हो। जब तक मुसलमान, मुसलमान हैं उनके लिए संभव नहीं है कि कल की बुराई आज भलाई हो जाए और कल फिर बुराई हो जाए। कोई अनुमान, कोई आविष्कार (इज्तिहाद), कोई संयुक्त निर्णय इस प्रकार के परिवर्तन का अधिकारी नहीं है।

१४. इस्लाम का तीसरा मूल विश्वास आख़िरत का विश्वास (परलोकवाद) है और इसका महत्व यह है कि इसका इंकार करने वाला 'काफ़िर' हो जाता है और अल्लाह, रसूल और क़ुरआन किसी चीज़ का मानना भी उसे कुफ़्र से नहीं बचा सकता। यह विश्वास प्रायः छः अनिवार्य विचारों पर आधारित है--

(क) संसार में मनुष्य उनुत्तरदायी बनाकर नहीं छोड़ा गया है, बल्कि वह अपने स्रष्टा के सामने उत्तरदायी है। संसार का वर्तमान जीवन वास्तव में इंसान की आज़माइश और परीक्षा के लिए है। इसकी समाप्ति पर उसे जीवन-कार्यों का हिसाब अल्लाह को देना होगा।

(ख) इस हिसाब-किताब के लिए अल्लाह ने एक समय निश्चित कर रखा है। मानव-जाति को दुनिया में कार्य करने के लिए जितनी मुहलत देने का अल्लाह निर्णय कर चुका है, उसकी समाप्ति पर प्रलय आएगी, जिसमें संसार की पूरी व्यवस्था नष्ट-विनष्ट हो जाएगी और एक दूसरी विश्व-व्यवस्था नये ढंग की स्थापित की जाएगी। उस नये संसार में वे तमाम लोग दोबारा जीवित करके उठाए जाएंगे, जो आदि काल से प्रलय तक पैदा हुए थे।

(ग) उस समय उन सब को एक ही समय में अल्लाह के दरबार में प्रस्तुत किया जायेगा और हर व्यक्ति को अपनी निजी

हैसियत में उन कर्मों की जवाबदेही करनी होगी जो उसने स्वयं अपनी ज़िम्मेदारी पर संसार में किये होंगे।

(घ) वहां अल्लाह केवल अपने निजी ज्ञान के आधार पर निर्णय नहीं कर देगा, बल्कि न्याय की तमाम शर्तें पूरी कर दी जाएंगी। हर व्यक्ति के जीवन-कर्मों का पूरा रिकार्ड बिना घट-बढ़ अदालत के सामने रख दिया जाएगा और बेशुमार क़िस्म की गवाहियां इस बात के प्रमाण में प्रस्तुत कर दी जाएंगी कि उसने खुफ़िया और एलानिया कुछ किया है और किस नीयत से किया है।

(ङ) अल्लाह की अदालत में कोई रिश्वत, कोई अनुचित सिफ़ारिश और कोई सत्य-विरोधी वकालत न चल सकेगी। किसी का बोझ दूसरे पर न डाला जाएगा, कोई क़रीबी नातेदार-रिश्तेदार या मित्र या नेता या मज़हबी पेशवा या मन-गढंत उपास्य किसी की मदद के लिए आगे न बढ़ेगा। इंसान वहां अकेला बिल्कुल बे-यार व मददगार खड़ा हुआ अपना हिसाब दे रहा होगा और निर्णय मात्र अल्लाह के हाथ में होगा।

(च) निर्णय का पूरा आश्रय इस बात पर होगा कि मनुष्य ने संसार में नबियों की बताई हुई सच्चाई को मानकर और परलोक में अपने उत्तर-दायित्व को मानकर ठीक-ठीक अल्लाह की बन्दगी की या नहीं। पहली शक्ल में उसके लिए जन्नत (स्वर्ग) है और दूसरी शक्ल में नरक।

१५. यह विश्वास तीन प्रकार के व्यक्तियों के जीवन के तरीक़ों को एक दूसरे से बिल्कुल ही अलग कर देता है। एक प्रकार के व्यक्ति वे हैं जो आख़िरत (परलोक) को नहीं मानते हैं और बस इसी संसार के जीवन को जीवन समझते हैं। वे निश्चित रूप से नेकी-बदी का मानदंड कर्मों के उन परिणामों को ही समझेंगे, जो

इस संसार में प्रकट होते हैं। यहां जिस कर्म का फल अच्छा या लाभप्रद हो, वह उनके निकट 'भलाई' होती है और जिसका फल बुरा या हानिप्रद होगा, वही उनके निकट 'बुराई' होगी, बल्कि बहुत बार कर्म-परिणामों की दृष्टि से एक ही चीज़ एक समय में भली और दूसरे में समय में 'बुरी' होगी।

दूसरे प्रकार के वे व्यक्ति हैं, जो आख़िरत को तो मानते हैं, पर उनको यह भरोसा है कि किसी की सिफ़ारिश अल्लाह की अदालत में उन्हें बचा लेगी या कोई उनके पापों का प्रायश्चित पहले ही दे चुका है, या वे अल्लाह के चहेते हैं, इसलिए उन्हें बड़े से बड़े पापों का दंड भी नाम-मात्र को दिया जाएगा। यह चीज़ आख़िरत के विश्वास के तमाम नैतिक लाभों को नष्ट करके दूसरे प्रकार के लोगों को भी पहले प्रकार के व्यक्तियों की पंक्ति में ले जाती है।

तीसरे प्रकार के लोग वे हैं, जो आख़िरत के विश्वास को ठीक उस रूप में मानते हैं, जिस रूप में इस्लाम उन्हें प्रस्तुत करता है और किसी प्रायश्चित या अनुचित सिफ़ारिश या अल्लाह से किसी विशेष संबंध के भ्रम में नहीं पड़े हुये हैं। उनके लिए यह विश्वास एक बहुत बड़ी नैतिक शक्ति रखता है। जिस व्यक्ति के दिल में आख़िरत का विश्वास अपने विशुद्ध स्वरूप में बैठा हुआ हो, उसका हाल ऐसा होगा, जैसे उसके साथ हर समय एक निगरां लगा हुआ हो, जो हर बुराई के हर इरादे पर उसे टोकता, हर क़दम पर उसे रोकता, और हर कार्य पर उसे फटकारता है। बाहर कोई पकड़ने वाली पुलिस, कोई गवाही देने वाला गवाह, कोई सज़ा देने वाली अदालत और कोई निन्दा करने वाला जन-मत मौजूद हो या न हो, उसके भीतर एक प्रबल जांच-पड़ताल करने वाला हर समय बैठा रहेगा, जिसकी पकड़ के डर से वह कभी एकान्त में, या वन में, या अंधेरे में या

किसी निर्जन स्थान पर भी अल्लाह के निर्धारित कर्त्तव्यों से पलायन और उसके बताये अवैध कार्य को करने का हौसला न कर सकेगा और मान लीजिए, यदि कर भी गुज़रे तो बाद में लज्जित होगा और तौबा करेगा। इससे बढ़ कर नैतिक सुधार तथा मनुष्य के भीतर एक सुदृढ़ चरित्र पैदा करने का कोई साधन नहीं। ईश्वर का श्रेष्ठतम क़ानून, जो इंसान को स्थाई मूल्य जुटाता है, उन पर दृढ़ता के साथ इंसान के जमने और उनसे किसी दशा में उसके न हटने का आश्रय इसी विश्वास पर है। इसीलिए इस्लाम में इसको इतना महत्व दिया गया है कि यदि यह न हो तो अल्लाह और रसूल पर ईमान भी बेकार है।

१६. इस्लाम, जैसा कि न० ६ में बयान कर चुका हूं, एक पूरी संस्कृति, एक व्यापक सभ्यता तथा प्रभाव-पूर्ण जीवन-व्यवस्था है तथा मानव-जीवन के तमाम अंगों में नैतिक पथ-प्रदर्शन करता है। इसलिए इसकी नैतिक व्यवस्था वास्तव में संसार-त्यागियों तथा योगियों और सन्यासियों के लिए नहीं है, बल्कि उन लोगों के लिए है जो जीवन के विभिन्न विभागों को चलाते अथवा इनके अन्दर काम करते हैं। नैतिकता की जो ऊंचाइयां संसार, ख़ानक़ाहों, मठों आदि में खोजती थी, इस्लाम उनको जीवन के बीच मंझधार में ले आना चाहता है, उसका मंशा यह है कि राज्यों के शासक, प्रान्तों के राज्यपाल, अदालतों के जज, सेना तथा पुलिस के अधिकारी, संसद सदस्यों, उद्योगों आदि के स्वामी, कालेज तथा युनिवर्सिटियों के अध्यापक तथा छात्र, बच्चों के बाप, बापों के बच्चे, पत्नियों के पति तथा पतियों की पत्नियां, पड़ोसियों के पड़ोसी, तात्पर्य यह है कि सभी इन नैतिक मूल्यों से आभूषित हों। वह चाहता है कि हर घर में भी इसी नैतिकता का चलन हो और मुहल्ले तथा बाज़ार में भी

सी का चलन हो। वह चाहता है कि कारोबारी संस्थाएं तथा रकारी विभाग उसी का पालन करें। राजनीति, सत्य तथा न्याय र आधारित हो। जातियां सत्यप्रियता तथा एक दूसरे के अधिकारो ा मान-सम्मान करने पर एक दूसरे से मामला करें। युद्ध भी हो तो ौजन्य तथा सभ्यता के साथ हो, न कि भेड़ियों जैसी पशुता के ाथ। इंसान जब सदाचरण अपना ले, अल्लाह के कानून को र्वोपरि मान ले, अल्लाह के सामने अपनी जवाब-देही को याद रख र स्थायी मूल्यों का पाबन्द हो जाए, तो फिर उसकी यह विशेषता ेवल इबादतगाह तक सीमित नहीं रहनी चाहिए, बल्कि जिस सियत में भी वह संसार के अन्दर काम कर रहा है, खुदा के सच्चे ौर वफ़ादार बन्दे की तरह ही काम करे।

यह है संक्षेप में वह चीज़, जिसका इस्लाम आह्वान करता है ौर वह किसी दार्शनिक का काल्पनिक स्वर्ग मात्र नहीं है, बल्कि ुहम्मद (सल्ल०) ने उसे व्यावहारिक रूप दिया और आज चौदह ौ वर्ष बीत जाने पर भी उसके प्रभाव मुस्लिम समाज में कम व श पाये जाते हैं।